भगवान् शंकर एवं लिंगार्चन का माहात्म्य(क्रमशः)

अर्जुन एवं श्रीकृष्ण पर अपने अमोघ आग्नेयास्त्र के विफल हो जाने पर अश्वत्थामा ने अत्यन्त दीनभाव से प्रणाम करके व्यासजी से पूछा।

महर्षे! यह माया है या दैवेच्छा। मेरी समझ में नहीं आता कि यह क्या है? यह अस्त्र झूठा कैसे हो गया? मुझसे कौन-सी गलती हो गयी? इस(आग्नेय) अस्त्र के प्रभाव में कोई उलट-फेर तो नहीं हो गया अथवा सम्पूर्ण लोकों का पराभव होनेवाला है, जिससे ये दोनों कृष्ण और अर्जुन जीवित बच गये। निश्चय ही काल का उल्लङ्घन करना अत्यन्त कठिन है। मेरे द्वारा प्रयोग किये हुए इस अस्त्र को असुर, गन्धर्व, पिशाच, राक्षस, सर्प, यक्ष, पक्षी और मनुष्य किसी तरह भी व्यर्थ नहीं कर सकते थे, तो भी यह प्रज्वलित अस्त्र केवल एक अक्षौहिणी सेना को जलाकर शान्त हो गया। मैंने तो अत्यन्त भयंकर एवं सर्वसंहारक अस्त्र का प्रयोग किया था; फिर उसने किस कारण से इन मर्त्यधर्मा श्रीकृष्ण और अर्जुन का वध नहीं किया? भगवन्! महामुने! मैंने जो आपसे यह प्रश्न किया है, इसका मुझे यथार्थ उत्तर दीजिये। मैं यह सब कुछ ठीक-ठीक सुनना चाहता हूँ।

व्यासजी बोले – तू जिसके सम्बन्ध में आश्चर्य के साथ प्रश्न कर रहा है, उस महत्त्वपूर्ण विषय को मैं तुझसे बता रहा हूँ। तू अपने मनको एकाग्र करके सब कुछ सुन। जो हमारे पूर्वजों के भी पूर्वज भगवान् नारायण हैं, उन जगदीश्वर को समस्त प्राणी मन से भी जीतने में असमर्थ हैं। वे विश्वविधाता भगवान् एक समय किसी विशेष कार्य के लिये धर्म के पुत्ररूप में अवतीर्ण हुए थे। अग्नि और सूर्य के समान महातेजस्वी उन भगवान् नारायण ने हिमालय पर्वत पर रहकर अपनी दोनों भुजाएँ ऊपर उठाये हुए बड़ी कठोर तपस्या की थी। उन कमलनयन श्रीहरि ने छाछठ हजार वर्षोंतक केवल वायु पीकर उन दिनों अपने शरीर को सुखाया । तदनन्तर उससे दुगुने कालतक फिर भारी तपस्या करके उन्होंने अपने तेज से पृथ्वी और आकाश के मध्यवर्ती भाग को भर दिया।

तात! उस तपस्या से जब वे साक्षात् ब्रह्मस्वरूप में स्थित हो गये, तब उन्हें उन भगवान् विश्वेश्वर का दर्शन हुआ जो सम्पूर्ण विश्व के उत्पत्ति-स्थान और जगत् के पालक हैं, जिन्हें पराजित करना अत्यन्त कठिन(असम्भव) है। सम्पूर्ण देवता जिनकी स्तुति करते हैं तथा जो सूक्ष्म से भी अत्यन्त सूक्ष्म और महान् से भी परम महान् हैं। वे 'रु' अर्थात् दुःख को दूर करने के कारण रुद्र कहलाते हैं। ब्रह्मा आदि लोकपालों में सबसे श्रेष्ठ हैं। पापहारी, कल्याण की प्राप्ति करानेवाले तथा जटाजूटधारी हैं। वे ही सबको चेतना प्रदान करते हैं और वे ही स्थावर-जङ्गम प्राणियों के परम कारण हैं।

उन्हें कहीं कोई रोक नहीं सकता, उनका दर्शन बड़ी कठिनाई से होता है, वे दुष्टों पर प्रचण्ड कोप करनेवाले हैं, उनका हृदय विशाल है, वे सारे क्लेशों को हर लेनेवाले अथवा सर्वसंहारी हैं, साधु पुरुषों के प्रति उनका हृदय अत्यन्त उदार है, वे दिव्य धनुष और दो तरकस धारण करते हैं, उनका कवच सोने का बना हुआ है तथा वे अनन्त बलपराक्रम से सम्पन्न हैं। वे अपने हाथों में पिनाक और वज्र

धारण करते हैं, उनके एक हाथ में त्रिशूल चमकता रहता है, वे फरसा, गदा और लंबी तलवार लिये रहते हैं, मुसल, परिघ और दण्ड भी उनके हाथों की शोभा बढ़ाते हैं, उनकी अङ्गकान्ति उज्ज्वल है, वे मस्तक पर जटा और उसके ऊपर चन्द्रमा का मुकुट धारण करते हैं, उनके श्रीअङ्ग में बाघम्बर शोभा देता है। उनकी भुजाओं में सुन्दर अङ्गद(बाजूबंद) और गले में नागमय यज्ञोपवीत शोभा पाते हैं, वे अपने पार्षदस्वरूप सम्पूर्ण भूतसमुदायों से सुशोभित हैं, उन्हें एकमात्र अद्वितीय परमेश्वर समझना चाहिये, वे तपस्या की निधि हैं और वृद्ध पुरुष प्रिय वचनों द्वारा उनकी स्तुति करते हैं। जल, दिशा, आकाश, पृथ्वी, चन्द्रमा, सूर्य, वायु, अग्नि तथा जगत् को माप लेनेवाला काल-ये सब उन्हीं के स्वरूप हैं। वे ब्रह्मद्रोहियों के नाशक और मोक्ष के परम कारण हैं, दुराचारी मनुष्य उनका दर्शन पाने में असमर्थ हैं।

जिन्होंने मन से शोक-संताप को सर्वथा दूर कर दिया है, वे सदाचारी ब्राह्मण पापों का क्षय हो जाने पर जिनका दर्शन कर पाते हैं, यह सम्पूर्ण विश्व जिनका स्वरूप है, जो साक्षात् धर्म तथा स्तवन करने योग्य परमेश्वर हैं, वे ही महेश्वर वहाँ उनकी तपस्या और भक्ति के प्रभाव से प्रकट हो गये तथा तपस्वी नारायण ने उनका दर्शन किया। उनका दर्शन करके मन, वाणी, बुद्धि और शरीर के साथ ही उनकी अन्तरात्मा हर्ष से खिल उठी। उन भगवान् वासुदेव ने बड़े आनन्द का अनुभव किया । रुद्राक्ष की माला से विभूषित तथा तेज की परम निधिरूप उन विश्व-विधाता का दर्शन करके भगवान् नारायण ने उनकी वन्दना की। वे वरदायक प्रभु पार्वती देवी के साथ क्रीड़ा करते हुए पधारे थे। उन अजन्मा, ईशान, अव्यक्त, कारणस्वरूप और अपनी महिमा से कभी च्युत न होनेवाले परमात्मा को उनके पार्षदस्वरूप भूतगणों ने घेर रक्खा था। कमलनयन भगवान् श्रीहरि ने पृथ्वी पर दोनों घुटने टेककर और मस्तक पर हाथ जोड़कर अन्धकासुर का विनाश करनेवाले उन रुद्रदेव को प्रणाम किया और भक्तिभाव से युक्त हो उन भगवान् विरूपाक्ष की वे इस प्रकार स्तुति करने लगे।

श्रीनारायण उवाच

त्वत्सम्भूता भूतकृतो वरेण्य गोप्तारोऽस्य भुवनस्यादिदेव।
आविश्येमां धरणीं येऽभ्यरक्षन् पुरा पुराणीं तव देवसृष्टिम्।।(72)

श्रीनारायण बोले-सर्वश्रेष्ठ आदिदेव! जिन्होंने इस पृथ्वी में समाकर आपकी पुरातन दिव्य सृष्टि की रक्षा की थी तथा जो इस विश्व की भी रक्षा करनेवाले हैं, वे सम्पूर्ण प्राणियों की सृष्टि करनेवाले प्रजापतिगण भी आप से ही उत्पन्न हुए हैं।

सुरासुरान् नागरक्षःपिशाचान् नरान् सुपर्णानथ गन्धर्वयक्षान्।
पृथग्विधान् भूतसंघांश्च विश्वांस्त्वत्सम्भूतान् विद्म सर्वांस्तथैव।
ऐन्द्रं याम्यं वारुणं वैत्तपाल्यं पैत्रं त्वाष्ट्रं कर्म सौम्यं च तुभ्यम्।।(73)

देवता, असुर, नाग, राक्षस, पिशाच, मनुष्य, गरुड़ आदि पक्षी, गन्धर्व तथा यक्ष आदि जो

पृथक्-पृथक् प्राणियों के अखिल समुदाय हैं, उन सबको हम आप से ही उत्पन्न हुआ मानते हैं। इसी प्रकार इन्द्र, यम, वरुण और कुबेर का पद, पितरों का लोक तथा विश्वकर्मा की सुन्दर शिल्पकला आदि का अविर्भाव भी आप से ही हुआ है।

रूपं ज्योतिः शब्द आकाशवायुः स्पर्शः स्वाद्यं सलिलं गन्ध उर्वी।
कालो ब्रह्मा ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च त्वत्सम्भूतं स्थास्नु चरिष्णु चेदम्।।(74)

शब्द और आकाश, स्पर्श और वायु, रूप और तेज, रस और जल तथा गन्ध और पृथ्वी की उत्पत्ति भी आपसे ही हुई है। काल, ब्रह्मा, वेद, ब्राह्मण तथा यह सम्पूर्ण चराचर जगत् भी आप से ही उत्पन्न हुआ है।

अद्भ्यः स्तोका यान्ति यथा पृथक्त्वं ताभिश्चैक्यं संक्षये यान्ति भूयः।
एवं विद्वान् प्रभवं चाप्ययं च मत्वा भूतानां तव सायुज्यमेति।।(75)

जैसे जल से उसकी बूँदें बिलग हो जाती हैं और क्षीण होने पर कालक्रम से वे पुनः जल में मिलकर उसके साथ एकरूप हो जाती हैं, उसी प्रकार सम्पूर्ण भूत आपसे ही उत्पन्न होते और आप में ही लीन होते हैं। ऐसा जाननेवाला विद्वान् पुरुष आपका सायुज्य प्राप्त कर लेता है।

दिव्यामृतौ मानसौ द्वौ सुपर्णौ वाचाशाखाः पिप्पलाः सप्त गोपाः।
दशाप्यन्ये ये पुरं धारयन्ति त्वया सृष्टास्त्वं हि तेभ्यः परो हि।।(76)

अन्तःकरण में निवास करनेवाले दो दिव्य एवं अमृतस्वरूप पक्षी(ईश्वर और जीव) हैं। सात धातुरूप सात पीपल हैं, जो उनकी रक्षा करनेवाले हैं। वेदवाणी ही उन वृक्षों की विविध शाखाएँ हैं। दूसरी भी दस वस्तुएँ(इन्द्रियाँ) हैं, जो पाञ्चभौतिक शरीररूपी नगर को धारण करती हैं। ये सारे पदार्थ आपके ही रचे हुए हैं, तथापि आप इन सबसे परे हैं।

भूतं भव्यं भविता चाप्यधृष्यं त्वत्सम्भूता भुवनानीह विश्वा।
भक्तं च मां भजमानं भजस्व मा रीरिषो मामहिताहितेन।।(77)

भूत, वर्तमान, भविष्य तथा अजेय काल-ये सब आपके ही स्वरूप हैं। यहाँ सम्पूर्ण लोक आपसे ही उत्पन्न हुए हैं। मैं आपका भजन करनेवाला भक्त हूँ, आप मुझे अपनाइये। अहित करनेवालों को रखकर मेरी हिंसा न कराइये।

आत्मानं त्वामात्मनोऽनन्यबोधं विद्वानेवं गच्छति ब्रह्म शुक्रम्।
अस्तौषं त्वां तव सम्मानमिच्छन् विचिन्वन् वै सदृशं देववर्य।
सुदुर्लभान् देहि वरान् ममेष्टानभिष्टुतः प्रविकार्षीश्च मायाम्।।(78)

आप जीवात्मा से अभिन्न अनुभव किये जानेवाले सबके आत्मा हैं, ऐसा जाननेवाला विद्वान् पुरुष विशुद्ध ब्रह्मभाव को प्राप्त होता है। देववर्य! मैंने आपके सत्कार की शुभ इच्छा लेकर यह स्तवन किया

है। स्तुति के सर्वथा योग्य आप परमेश्वर का मैं चिरकाल से अन्वेषण कर रहा था। जिनकी भलीभाँति स्तुति की गयी है ऐसे आप अपनी माया को दूर कीजिये और मुझे अभीष्ट दुर्लभ वर प्रदान कीजिये।

व्यासजी कहते हैं - द्रोणकुमार! नारायण ऋषि के इस प्रकार स्तुति करने पर अचिन्त्यस्वरूप, पिनाकधारी, नीलकण्ठ भगवान् शिव ने वर पाने के सर्वथा योग्य उन देवप्रधान नारायण को बहुत से वर दिये।

श्रीभगवान् बोले – नारायण! तुम मेरे कृपा - प्रसाद से मनुष्यों देवताओं तथा गन्धर्वों में भी असीम बल - पराक्रम से सम्पन्न होओगे। देवता, असुर, बड़े - बड़े सर्प, पिशाच, गन्धर्व, यक्ष, राक्षस, सुपर्ण, नाग तथा समस्त पशुयोनि के (सिंह, व्याघ्र आदि) प्राणी भी तुम्हारा वेग नहीं सह सकेंगे। युद्धस्थलों में कोई देवता भी तुम्हें जीत नहीं सकेगा। शस्त्र, वज्र, अग्नि, वायु, गीले - सूखे पदार्थ और स्थावर एवं जङ्गम प्राणी के द्वारा भी कोई मेरी कृपा से किसी प्रकार तुम्हें चोट नहीं पहुँचा सकता। तुम समरभूमि में पहुँचने पर मुझसे भी अधिक बलवान् हो जाओगे।

व्यासजी अश्वथामा से कहते हैं कि तुझे मालूम होना चाहिये, इस प्रकार श्रीकृष्ण ने पहले ही भगवान् शंकर से ये अनेक वरदान पा लिये हैं। वे ही भगवान् नारायण श्रीकृष्ण के रूप में अपनी माया से इस संसार को मोहित करते हुए विचर रहे हैं। नारायण के ही तप से महामुनि नर प्रकट हुए हैं, जो इन भगवान् के ही समान शक्तिशाली हैं। तू अर्जुन को सदा उन्हीं भगवान् नर का अवतार समझ। ये दोनों ऋषि प्रमुख देवता, ब्रह्मा, विष्णु और रुद्र में से विष्णुस्वरूप हैं और तपस्या में बहुत बढ़े - चढ़े हैं। ये लोगों को धर्म - मर्यादा में रखकर उनकी रक्षा के लिये युग - युग में अवतार ग्रहण करते हैं।

महामते! तू भी (अपने पूर्वजन्म में) भगवान् नारायण के ही समान ज्ञानवान् होकर उनके ही जैसे सत्कर्म तथा बड़ी भारी तपस्या करके उसके प्रभाव से पूर्ण तेज और क्रोध धारण करनेवाला रुद्रभक्त हुआ था और सम्पूर्ण जगत् को शंकरमय जानकर उन्हें प्रसन्न करने की इच्छा से तूने नाना प्रकार के कठोर नियमों का पालन करते हुए अपने शरीर को दुर्बल कर डाला था। मानद! तूने यहाँ परम पुरुष भगवान् शंकर के उज्ज्वल विग्रह की स्थापना करके होम, जप और उपहारों द्वारा उनकी आराधना की थी। विद्वन्! इस प्रकार पूर्वजन्म के शरीर में तुझसे पूजित होकर भगवान् शंकर बड़े प्रसन्न हुए थे और उन्होंने तुझे बहुत - से मनोवाञ्छित वर प्रदान किये थे। इस प्रकार तेरे और नर - नारायण के जन्म, कर्म, तप और योग पर्याप्त हैं।

परन्तु नर - नारायण ने शिवलिङ्ग में तथा तूने प्रतिमा में प्रत्येक युग में महादेवजी की आराधना की है। जो भगवान् शंकर को सर्वस्वरूप जानकर शिवलिङ्ग में उनकी पूजा करता है, उसमें सनातन आत्मयोग (आत्मा - परमात्मा के तत्त्व का ज्ञान) तथा शास्त्रयोग (स्वाध्यायजनित ज्ञान) प्रतिष्ठित होते हैं। इस प्रकार आराधना करते हुए देवता, सिद्ध और महर्षिगण लोक में एकमात्र सर्वोत्कृष्ट भगवान् शंकर से ही अभीष्ट वस्तु की प्रार्थना करते हैं क्योंकि वे ही सब कुछ करनेवाले हैं। ये श्रीकृष्ण

भगवान् शंकर के भक्त हैं और उन्हीं से प्रकट हुए हैं। जो भगवान् शिव के लिङ्ग को सम्पूर्ण भूतों की उत्पत्ति का स्थान जानकर उसकी पूजा करता है, उसपर भगवान् शंकर अधिक प्रेम करते हैं।

व्यासजी की यह बात सुनकर द्रोणपुत्र महारथी अश्वत्थामा ने मन-ही-मन भगवान् शंकर को प्रणाम किया और श्रीकृष्ण की भी महत्ता स्वीकार कर ली।

(श्रीमहाभारत-द्रोणपर्व-नारायणास्त्रमोक्षपर्व अ. 201)

(महाभारत का उपर्युक्त अंश गीताप्रेस, गोरखपुर द्वारा प्रकाशित सटीक 'महाभारत' से लिया गया है।)

❁❁❁❁❁❁

पूर्वजन्म की स्मृति का हेतु

उमा ने शिव से पूछा-भगवन्! कुछ मनुष्यों को पूर्वजन्म की बातों का स्मरण होता है। वे किस लिये पूर्व शरीर के वृत्तान्त को जानते हुए जन्म लेते हैं?

उमोवाच-

भगवन् मानुषाः केचिज्जातिस्मरणसंयुताः।
किमर्थमभिजायन्ते जानन्तः पौर्वदैहिकम्।।

श्रीमहेश्वर ने कहा-देवि! मैं तुम्हें तत्त्व की बात बता रहा हूँ, एकाग्रचित्त होकर सुनो। जो मनुष्य सहसा मृत्यु को प्राप्त होकर फिर कहीं सहसा जन्म ले लेते हैं, उनका पुराना अभ्यास या संस्कार कुछ कालतक बना रहता है।

तदंह ते प्रवक्ष्यामि शृणु तत्त्वं समाहिता।।
ये मृताः सहसा मर्त्या जायन्ते सहसा पुनः।
तेषां पौराणिकोऽभ्यासः कंचित् कालं हि तिष्ठति।।

इसीलिये वे लोक में पूर्वजन्म की बातों के ज्ञान से युक्त होकर जन्म लेते हैं और जातिस्मर(पूर्वजन्म का स्मरण करनेवाले) कहलाते हैं। फिर ज्यों-ज्यों वे बढ़ने लगते हैं, त्यों-त्यों उनकी स्वप्न जैसी वह पुरानी स्मृति नष्ट होने लगती है। ऐसी घटनाएँ मूर्ख मनुष्यों को परलोक की सत्ता पर विश्वास कराने में कारण बनती हैं।

तस्माज्जातिस्मरा लोके जायन्ते बोधसंयुताः।
तेषां विवर्धतां संज्ञा स्वप्नवत् सा प्रणश्यति।।
परलोकस्य चास्तित्वे मूढानां कारणं त्विदम्।

(महाभारत, अनुशासनपर्व, गीताप्रेस, गोरखपुर, अध्याय 145, उपअध्याय 9 दक्षिणात्य पाठ पृ. 5977-78)